इकाई 30 1857 का विद्रोह—कारण और स्वरूप

इकाई की रूपरेखा

30.0 उद्देश्य

इस इकाई में 1857 के विद्रोह की पृष्ठभूमि पर संक्षेप में विचार-विमर्श किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त इस विद्रोह के स्वरूप के संबंध में प्रकट की गयी परस्पर विरोधी व्याख्यायों पर भी दृष्टिपात किया जायेगा। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- सिपाहियों के असंतोष को रेखांकित कर सकेंगे;
- औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था के परिप्रेक्ष्य में विद्रोह को आंक सकेंगे;
- विद्रोह के भू-क्षेत्र में भू-राजस्व बंदोबस्त के प्रभाव की परीक्षा कर सकेंगे;
- अधिग्रहण के खिलाफ उपजे आक्रोश को समझ सकेंगे;
- विद्रोह में धार्मिक भावनाओं की भूमिका का मूल्यांकन कर सकेंगे; और
- विद्रोह के स्वरूप को समझ सकेंगे और इस पर हुए विवाद से परिचित हो सकेंगे।

30.1 प्रस्तावना

इकाई 29 में हमने आदिवासी और किसान विद्रोहों पर विचार-विमर्श किया। इस विचार-विमर्श के क्रम में एक बात उभर कर सामने आयी कि 18वीं शताब्दी के मध्य से 19वीं शताब्दी के मध्य तक भारतीय समाज और अर्थव्यवस्था के औपनिवेशीकरण के प्रयत्न का हर चरण पर विरोध किया गया। 1857 में उत्तरी और मध्य भारत में जन असंतोष को सिपाही विद्रोह का सहारा मिल गया, जो औपनिवेशिक शासन के लिए घातक सिद्ध हुआ। विद्रोह के कारण पर विचार करते समय—सेना और ग्रामीण समाज की जड़ों में विद्रोह का बीज ढूंढना होगा। विद्रोह के कारणों को ढूंढने के क्रम में सेना और ग्रामीण समाज के संबंधों तथा प्रतिरोध के स्वरूप और प्रक्रिया को भी समझने में मदद मिलेगी।

इस इकाई के भाग 30.2 और 30.4 में विद्रोह की पृष्ठभूमि पर विचार-विमर्श किया गया है। इससे हमें इकाई के अगले हिस्सों (30.5 से 30.8) को समझने में मदद मिलेगी, जिसमें विद्रोह के स्वरूप के संबंध में विभिन्न इतिहासकारों के मतों को सामने रखा गया है। विद्रोह के स्वरूप पर यह बहस विद्रोह के सौ साल पूरे होने पर शुरू हुई थी, जो 1980 के दशक तक जारी रही।

30.2 विद्रोह की पृष्ठभूमि

मई और जून 1857 के बीच यह विद्रोह तेजी से फैला। हम इस इकाई में इसी बात पर विचार करने जा रहे हैं। ब्रिटिश सेना के सिपाहियों ने इस जन विद्रोह को शक्ति प्रदान की। 1857 के विद्रोह के विभिन्न पहलुओं को समझने के लिए हम यहां बंगाल सेना के सिपाहियों के असंतोष औपनिवेशिक शासन के प्रभाव और भू-राजस्व बंदोबस्त के परिणाम पर विस्तार से विचार करेंगे।

30.2.1 सेना

29 मार्च 1857 को कलकत्ता के निकट बैरकपुर में मंगल पांडे नामक एक सिपाही ने एक यूरोपीय अधिकारी की हत्या कर दी। विद्रोह की शुरुआत यहीं से हुई। हालांकि इस विद्रोह को दबा दिया गया, पर अगले कुछ सप्ताहों में सिपाहियों का असंतोष तेजी से प्रस्फुटित हुआ। 10 मई 1857 को मेरठ के सिपाहियों ने अपने अफसर का कत्ल कर दिया और 11 मई को दिल्ली की ओर कूच किया। उन्होंने मुगल बादशाह बहादुरशाह द्वितीय से 1857 की क्रांति का नेता बनने का अनुरोध किया। बहादुरशाह द्वितीय इस समय अंग्रेजों का पेंशनर मात्र थ..। ईस्ट इंडिया कंपनी के लगभग आधे सिपाहियों ने विद्रोह कर दिया। इन सिपाहियों में ज्यादातर उत्तर पश्चिमी प्रदेश और अवध सूबे की उच्च जाति का प्रतिनिधित्व करते थे। इनमें से एक तिहाई सिपाही अवध प्रांत के थे, इस प्रकार उनका एक संगठित समूह था। उच्च जाति के ये सिपाही पिछले कई वर्षों से यह महसूस कर रहे थे कि उनकी सेवाशर्तों के कारण उनकी धार्मिक भावनाओं के लिये खतरा है।

- 1806 में पगड़ी के स्थान पर चमड़े की कलगी के प्रचलन से वेल्लोर में बलवा हुआ।
- 1824 में बैरकपुर के सिपाहियों ने बर्मा जाने से इंकार कर दिया, क्योंकि विदेश जाने से धर्म-नाश का खतरा था।
- सिंध भेजे जाने के विरोध में 1844 में बंगाल सेना में बलवा हुआ। सिंध को पार करना जाति का विनाश करना माना जाता था।

1857 की क्रांति के आसपास यह अफवाह भी उड़ी कि आटे में हड्डी का चूर्ण मिला होता है। एनफील्ड राइफल (जनवरी 1857 से इसे प्रयोग में लाया गया) में भरी जाने वाली कारतूस को भरने से पहले उसका पिछला हिस्सा दांत से निकालना पड़ता था। इसके बारे में यह बात तेजी से फैली कि कारतूस के इस हिस्से में सूअर और गाय की चर्बी का इस्तेमाल किया जाता था। इससे सिपाहियों के भीतर यह भय समा गया कि उनका धर्म खतरे में है।

इसके अतिरिक्त सिपाहियों में सेवा संबंधी शर्तों के कारण भी असंतोष था।

- पैदल सिपाही को केवल 7 रुपया महीना वेतन मिलता था।
- घुड़सवार को 27 रुपये मिलते थे, जिसमें उसे अपनी वर्दी, भोजन और जानवर की देखभाल करनी पड़ती थी।
- पदोन्नति, पेंशन और सेवाशर्तों में प्रजातीय भेदभाव अपनाया जाता था।
- अधिग्रहण से सिपाहियों की विदेश सेवा के लिए भत्ता (अतिरिक्त भुगतान) की सुविधा समाप्त हो गयी।
- सिपाहियों में यह भय भी समाया हुआ था कि पंजाब से जवानों की नियुक्ति से उनका असर कम हो जाएगा।

3. मंगलपांडेय

4. बहादुरशाह II

30.2.2 औपनिवेशिक परिदृश्य

1857 की क्रांति का विश्लेषण करने के लिए औपनिवेशिक शासन के स्वरूप को समझना जरूरी है, क्योंकि इसने समाज के हर तबके के हितों को चोट पहुंचाई।

- उच्च प्रशासनिक पदों से भारतीयों को वंचित कर दिया गया। कई क्रांति दस्तावेजों में इस प्रजातीय भेदभाव की चर्चा की गयी है।
- ब्रिटेन से तैयार माल के आयात और भारतीय राज्यों के अधिग्रहण के कारण संरक्षण के अभाव के कारण शिल्पियों और हस्तकलाकारों को काफी धक्का पहुंचा।
- भू-राजस्व बंदोबस्त के कारण भू-स्वामियों को भूमि से हाथ धोना पड़ा और ग्रामीण समाज पर भू-निर्धारण का भारी असर पड़ा।
- प्रत्येक वर्ष राजस्व की बकाया राशि वसूल करने के लिए भू-स्वामियों और किसानों के स्वामित्व अधिकारों को बेचा जाता था।
- कई स्थानों पर बनिये (व्यापारी) इस अधिकार को खरीद लेते थे, जिनका सीधा जमीन से कुछ लेना-देना नहीं होता था और वे अक्सर बाहरी व्यक्ति होते थे।

इन कारणों से औपनिवेशिक सरकार की राजस्व और न्यायिक व्यवस्था के खिलाफ लोगों में असंतोष का भाव गहराने लगा। 1857 के विद्रोह के स्वरूप पर विचार करते समय हम इस तथ्य पर विचार करेंगे।

बोध प्रश्न 1

1) सही वक्तव्य के सामने (✓) और गलत के सामने (×) का चिह्न लगाएँ।
   (क) एनफिल्ड एक स्थान का नाम था।
   (ख) सिपाहियों की नियुक्ति ज्यादातर पंजाब से होती थी।
   (ग) 1857 के पहले भी सिपाही बगावतें हुई थीं।
   (घ) अधिग्रहण से केवल रजवाड़े प्रभावित हुए।
   (ङ) बनियों द्वारा ग्रामीण संपत्ति खरीदे जाने का विरोध नहीं किया गया।

2) सिपाहियों के असंतोष पर 5 पंक्तियों में प्रकाश डालें।

....
....
....
....
....

3) औपनिवेशिक शासन के तीन पहलुओं का उल्लेख करें।

....
....
....

30.2.3 भू-राजस्व बंदोबस्त

भू-राजस्व बंदोबस्त 1857 की क्रांति का एक बड़ा कारण था। उत्तरी पश्चिमी प्रांतों और अवध में भू-राजस्व बंदोबस्त लागू किया गया, इससे ताल्लुकदारों और किसानों पर बुरा प्रभाव पड़ा। इस प्रभाव का कितना असर 1857 की क्रांति पर पड़ा या नहीं पड़ा? इन्हीं सवालों के इर्द-गिर्द क्रांति के स्वरूप का सवाल भी घूमता है और इन्हीं सवालों का जवाब देने के क्रम में विभिन्न विद्वान विभिन्न मत सामने रखते हैं। आइए एक-एक कर इनका परीक्षण करें।

उत्तरी पश्चिमी प्रांत

इस क्षेत्र में बंदोबस्त करने के पीछे टेरिटोरियल विभाग के सचिव हौल्ट मैकेन्ज़िया का प्रमुख हाथ था। 1822 के अधिनियम VII में प्रस्तावित उसके सुझाव ताल्लुकदारों के खिलाफ थे और उसने ग्रामीण समुदायों को संरक्षित करने के लिए जमींदारों और पट्टेदारों से सीधा बंदोबस्त किया। 1840 में राजस्व बोर्ड के अध्यक्ष आर.एम. बर्ड और उत्तरी पश्चिमी प्रांत के गवर्नर जेम्स थामसन ने उसके सुझावों को कार्यान्वित किया। "थाम्सोनियन बंदोबस्त" (जैसा इसे कहा जाता था) में ताल्लुकदारों के खिलाफ पूर्वाग्रह बना रहा। 1840 के आसपास संपत्तिगत अधिकारों की सटीक परिभाषा निर्धारित करने से बाहर के लोगों ने भूमि में काफी पैसा निवेशित किया, इससे काफी भूमि का स्थानांतरण हुआ और संयुक्त जोत टुकड़ों में बंट गयी।

उत्तरी पश्चिमी प्रांतों में राजस्व बंदोबस्त का परिणाम इस प्रकार रहा :

- ताल्लुकदारों के प्रति सही रवैया न अपनाये जाने के कारण एक दशक के भीतर उनकी काफी सम्पदा छिन गयी। कई ताल्लुकदारों का विभाजन हो गया या वे नष्ट हो गये।
- जमींदारों (व्यक्तिगत/संयुक्त) की स्थिति भी बड़ी नाजुक थी, उन पर कर्ज का बोझ इतना ज्यादा था कि वे दिवालियेपन की कगार पर खड़े थे। वे अभी बटाईदार (भाड़े के किसान) तो नहीं बन पाये थे, पर कर्जदाताओं के दया पर जीवित थे। केवल एक साल में (1852-53) उत्तर पश्चिमी प्रांतों में 104, 730 एकड़ जमीन बकाया राशि के भुगतान के लिए बेच दी गयी।

अवध

फरवरी 1856 में अवध का अधिग्रहण कर लिया गया और 1856-57 में थौम्सोनियन पद्धति पर बंदोबस्त किया गया। इसके निम्नलिखित परिणाम सामने आये :

- समग्र रूप से राजस्व निर्धारण में कमी आयी (कई जगहों में 37 प्रतिशत तक), कई स्थानों पर राजस्व निर्धारण जरूरत से ज्यादा किया गया जो 28 प्रतिशत से 63 प्रतिशत तक था।
- कुछ ताल्लुकदारी राज्यों को घटाकर 44-55 प्रतिशत तक सीमित कर दिया गया।
- ब्रिटिश अधिग्रहण के पहले ताल्लुकदार किसानों से अपनी जरूरत के मुताबिक खेत से अपना हिस्सा लेता था, अंग्रेजों ने स्थाई नगद राजस्व का निर्धारण किया, जो अक्सर जरूरत से ज्यादा होता था। फसल कम होने या फसल का कम दाम मिलने की स्थिति में, किसानों को घाटा होता था।

इस बात पर गौर किया जाना चाहिए कि अवध के सिपाहियों की तरफ से 14,000 अर्जियां दी गयीं थीं, जिसमें राजस्व व्यवस्था से उत्पन्न कठिनाइयों का जिक्र था।

30.3 अधिग्रहण

1818 में, मराठों की हार और ईस्ट इंडिया कंपनी के साथ सहायक संधि स्थापित करने के बाद अंग्रेज सर्वोच्च शक्ति के रूप में उभरे। डलहौजी ने अपनी अधिग्रहण की नीति के तहत नई राज्यों को ब्रिटिश राज में मिला लिया : सतारा (1848), नागपुर, सम्बलपुर और बघात (1850), उदयपुर (1852) और झांसी (1853)। झांसी की रानी भी अंग्रेजों को संतुष्ट रखने में असफल रहीं और झांसी को हाथ से निकलते देख उन्होंने 1857 में विद्रोह का झंडा उठा लिया। फरवरी 1856 में जब वाजिद अली शाह ने अवध का प्रशासन ईस्ट इंडिया कंपनी के हाथ में देने से इंकार कर दिया, कुप्रशासन के बहाने अवध को ब्रिटिश राज में मिला लिया गया। हालांकि 1765 से ही अंग्रेजों की उपस्थिति के कारण अवध अर्थव्यवस्था अव्यस्थित और खोखली होने लगी थी। कंपनी और यूरोपीय व्यापारियों ने इसके आर्थिक स्रोतों पर अधिकार जमा रखा था, इस तरीके से अवध की प्रशासनिक हैसियत समाप्त की जा चुकी थी।

अंग्रेजों ने केवल अतिरिक्त राजस्व की प्राप्ति के लिए अवध का उपयोग नहीं किया बल्कि वहां पूंजी निवेश भी किया, नील और कपास की खेती को बढ़ावा दिया और इसे बाजार के रूप में भी विकसित किया।

निम्नलिखित कारणों से अवध के अधिग्रहण का जोरदार विरोध हुआ :

- बादशाह को कलकत्ता निर्वासित कर दिया गया था,
- ताल्लुकदारों को निशस्त्र कर दिया गया और उनके किले तोड़ दिये गये,
- दरबारों के भंग हो जाने से कई लोग बेरोजगार हो गये, इनमें सेना में भर्ती लोग और कारीगर भी शामिल थे,
- भू-राजस्व बंदोबस्त ने आग में घी का काम किया।

उत्तर और मध्य भारत में अंग्रेजों के खिलाफ बगावत के लिए खूब प्रचार किया गया और इसकी कामयाबी के लिए जोरदार प्रयास किये गये।

30.4 धर्म और संस्कृति

1857 के विद्रोह के काफी पहले से कट्टरपंथी हिंदुओं और मुसलमानों के मन में यह धारणा

घर जमा रही थी कि नये कानूनों द्वारा अंग्रेज उनके धर्म और संस्कृति को नष्ट करने की कोशिश कर रहे हैं। मसलन, सती प्रथा की समाप्ति, विधवा विवाह, 1850 के कानून के तहत इसाई धर्म ग्रहण करने के बावजूद पैतृक संपत्ति पर अधिकार आदि।

विद्रोह की कई उद्घोषणाओं में इस प्रकार की चिंता व्यक्त की गयी थी। दिल्ली में जारी एक घोषणा पत्र में यह कहा गया था कि अंग्रेज सिपाहियों का धर्म नष्ट करना चाहते हैं और इसके बाद लोगों को इसाई धर्म कबूल करने को बाध्य करेंगे। इस प्रकार धर्म इस विद्रोह की लड़ाई की प्रमुख प्रेरणा शक्ति बन गया, सिपाही और देहातों में रहने वाले लोग इसी धर्म-भावना से लड़ रहे थे।

इसका तात्पर्य यह नहीं है कि 1857 में केवल धर्म की ही भूमिका थी, पर यह बात निश्चित है कि इसके माध्यम से लोगों का असंतोष व्यक्त हुआ। धर्म की रक्षा और अंग्रेजों के खिलाफ संघर्ष एक-दूसरे से जुड़े हुए थे और इस युद्ध में हिंदू और मुसलमान दोनों संघर्षरत थे। बहादुरशाह की उद्घोषणा में मोहम्मद और महावीर की महत्ता पर जोर दिया गया था।

बोध प्रश्न 2

1) पाँच पंक्तियों में 'थाम्सोनियम बंदोबस्त' को संक्षेप में लिखें।

....

....

....

....

....

2) विद्रोह के पूर्व उत्तरी पश्चिमी प्रांतों और अवध के ग्रामीण समाज में हुए परिवर्तनों पर संक्षेप में टिप्पणी करें।

....

....

....

....

....

3) विद्रोह में धर्म का स्वर इतना मुखर क्यों था?

....

....

....

....

....

30.5 विद्रोह का स्वरूप : एक बहस

बीसवीं शताब्दी के छठे और सातवें दशक में इतिहासकारों के बीच यह बहस का मुद्दा रहा कि यह विद्रोह एक सिपाही बगावत थी, राष्ट्रीय आंदोलन था या सामंती प्रतिक्रिया का प्रस्फुटन था। आइए, इस बहस के प्रमुख तर्कों पर गौर करें।

30.5.1 सिपाही बगावत

भारतीय असंतोष को कम करके आंकने के लिए, अंग्रेज इतिहासकारों ने यह मत सामने रखा कि यह विद्रोह सिपाहियों की बगावत से ज्यादा कुछ नहीं था। अतः उन्होंने इस विद्रोह को सिपाही बगावत का नाम दिया। इन इतिहासकारों ने निम्नलिखित मुद्दों पर विस्तार से प्रकाश डाला :

- ग्रीस लगे कारतूस का ब्यौरा

- विद्रोही सिपाहियों की गतिविधियां
- 1857-58 के बीच अंग्रेजों द्वारा विद्रोह को दबाने के प्रयास।

इसमें न केवल जनता की बगावत के तथ्य को छिपा दिया गया, बल्कि जन विद्रोह को कुछ सामंतों और राजाओं की स्वार्थपूर्ति का एक प्रयास बताया गया। समग्र रूप में, इस दृष्टिकोण में उस औपनिवेशिक परिदृश्य की अवहेलना की गयी, जिसके कारण विद्रोह का जन्म हुआ।

30.5.2 राष्ट्रीय संघर्ष या सामंती प्रतिक्रिया

औपनिवेशिक सरकार के खिलाफ राष्ट्रीय आंदोलन की शुरुआत के बाद 1857 के विद्रोह को इन संघर्ष की एक कड़ी के रूप में देखा जाने लगा और अब चर्बी लगे कारतूसों की अपेक्षा ब्रिटिश दमन को विद्रोह का प्रमुख कारण माना जाने लगा। 1902 में वी.डी. सावरकर की पुस्तक 'भारत के 1857 का स्वतंत्रता आंदोलन छद्‌य' नाम से प्रकाशित हुई ब्रिटिश शासन के दौरान भारत में इस पर प्रतिबंध लगा रहा।

इस विद्रोह के सौ वर्ष पूरे होने पर तत्संबंधी कई पुस्तकों में निम्नलिखित तर्क पेश किये गये :
- इस विद्रोह में सुनिश्चित नीति का अभाव था, अत: यह व्याख्या कमजोर लगती है।
- इस विद्रोह के नेता राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत नहीं थे, अतः इस विद्रोह को राष्ट्रीय आंदोलन से जोड़ना तथ्य को जरूरत से ज्यादा खींचना प्रतीत होता है।
- 1857 का विद्रोह स्वतंत्रता आंदोलन का उद्‌घोष नहीं था बल्कि क्षीण हो रहे कुलीनतंत्र का अंतिम असफल प्रयास था।

दूसरी तरफ, ''राष्ट्रीय'' शब्द के सीमित अर्थ में प्रयोग पर प्रश्नचिह्न लगाया गया और यह कहा गया कि यह विद्रोह के साम्राज्य विरोधी रुख को तथा 1857-58 की हिंदू-मुस्लिम एकता को कम करके आंकने का प्रयास है।

हाल में एक मत सामने आया है कि यह विद्रोह अपने आप में राष्ट्रीय नहीं था, पर उसका राजनीतिक दृष्टिकोण केवल अपने इलाके तक ही सीमित नहीं था। यह मान्यता भी सामने आयी कि विद्रोहियों का उद्देश्य नयी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना था बल्कि परंपरागत व्यवस्था, मसलन पदानुक्रम, संरक्षण और असमानता की स्थापना करना था।

30.6 निहित स्वार्थ

बीसवीं शताब्दी के आठवें दशक में बहस का मुद्दा ''सिपाही बगावत'' या ''राष्ट्रीय विद्रोह'' आदि तक, सीमित नहीं रह गया, बल्कि अब उत्तरी पश्चिम प्रांतों और अवध में हुए 1857 के विद्रोह के सामाजिक कारणों की खोज की जाने लगी। इस क्षेत्र में कई लोगों ने अध्ययन किए, जिसमें भू-राजस्व बंदोबस्त और विद्रोह के प्रत्यक्ष संबंध को निम्नलिखित तर्कों के आधार पर नकारा गया :
- विद्रोह में ताल्लुकदारों की हिस्सेदारी का एकमात्र कारण 'थाम्सोनियन बंदोबस्त' नहीं था, क्योंकि कुछ उद्यमी ताल्लुकदारों ने व्यापारिक फसल (कपास और नील) से खूब मुनाफा कमाया और उन्होंने विद्रोह में हिस्सा नहीं लिया।
- बनियों (जिन्होंने गांव की जमीन खरीदी थी) के खिलाफ रोष भी ग्रामीण विद्रोह का एकमात्र और आधारभूत कारण नहीं था। वस्तुत: सहारनपुर और मेरठ के उन इलाकों में विद्रोह की लपट सबसे तेज थी, जहां महाजनों का प्रभाव कम था और भू-राजस्व का भार अधिक था।

अत: 1857 में ताल्लुकदारों की हिस्सेदारी को दूसरे ढंग से व्याख्यायित किया गया। विद्रोह द्वारा एक अव्यवस्था का माहौल बन गया, जिसमें कई जातियों, जैसे राजपूत और जाट, अहीर और चौहान आदि, ने अपनी पुरानी दुश्मनी की कसर निकाली और पारिवारिक दुश्मनी ने भी इस माहौल का जमकर लाभ उठाया। अत: यह कहा जा सकता है कि 'थाम्सोनियन बंदोबस्त' असंतोष की भीड़ का एक छोटा सा हिस्सा था, जिसके कारण कुछ ताल्लुकदारों ने विद्रोह में हिस्सा लिया और कुछ ने नहीं।

30.7 सामान्यीकरण सही दृष्टिकोण नहीं

यह मत भी सामने रखा गया कि विद्रोह के सृजन में खास-खास क्षेत्रों की निर्धनता का भी

योगदान है। (अ) पर्यावरण संबंधी कारणों से जहां की जमीन कम उपजाऊ थी वहां गरीबी भी ज्यादा थी। (ब) भू-राजस्व बंदोबस्त लागू करते समय भूमि की उर्वरता का ध्यान नहीं रखा गया और यह मान लिया गया कि सभी भूमि एक प्रकार की उपज देती है। इस मान्यता के आधार पर सभी क्षेत्रों में भारी करारोपण किया गया। इस बंदोबस्त से उत्तरी पश्चिमी प्रांतों के गूजर और राजपूत बुरी तरह प्रभावित हुए और उन्होंने विद्रोह में खुलकर हिस्सा लिया। सहारनपुर के गूजरों और इटावा तथा इलाहाबाद के राजपूतों ने भी विद्रोह में हिस्सा लिया, जो सामाजिक साहचर्य कायम करना चाहते थे। जिन ग्रामीण इकाइयों में कई जातियां शामिल थीं, वे निष्क्रिय रहीं।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में इस विद्रोह की राजनीतिक प्रतिक्रिया अलग-अलग थी। अत: यह माना जा सकता है कि 1857 का विद्रोह कोई एक विद्रोह नहीं था, बल्कि कई विद्रोहों का समुच्चय था और इसे सामान्यीकृत करना असंभव है।

30.8 समृद्धों का आंदोलन या जन विरोध?

इकाई के इस अंश में हम इस तथ्य पर विचार करेंगे कि विद्रोह का स्वरूप कैसा था? क्या यह समृद्धों द्वारा नियंत्रित आंदोलन था या यह जन विरोध था। कुछ इतिहासकारों का मत है कि इस विद्रोह में निर्णय की बागडोर ताल्लुकदारों के हाथ में थी और विद्रोह का रुख समृद्ध लोगों की उपस्थिति और अनुपस्थिति से निर्धारित हुआ। उदाहरण के लिए कर से पीड़ित अलीगढ़ के जाटों और राजपूतों के आक्रोश को स्थानीय समृद्ध लोगों ने दबा दिया। कानपुर के नीचे दोआब क्षेत्र में अंकुश लगाने वाली ऐसी कोई शक्ति नहीं थी। इसी प्रकार ताल्लुकदारों ने बगावत की, और किसानों को अपने साथ ले लिया।

इस दृश्य को देखकर ऐसा लगता है कि इस विद्रोह में ताल्लुकदारों की ही प्रमुख भूमिका थी, जनता की सहभागिता नगण्य थी। पर यह बात ऐसी नहीं है। यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि भूमिधर कुलीन लोगों के अतिरिक्त अन्य कई क्षेत्रों से भी विद्रोह का उद्घोष हुआ। खैराती खान, शाह मल और मौलवी अहमदुल्ला शाह जैसे जन नेताओं का उदय इस बात का प्रमाण है कि जनता के बीच से भी नेतृत्व पैदा हुआ। निश्चित रूप से ग्रामीण समाज पर अभी और काम करने की जरूरत है और यह खोजबीन करने की आवश्यकता है कि समृद्ध लोगों के अतिरिक्त साधारण ग्रामवासियों की विद्रोह में क्या भूमिका थी। यह तथ्य गौर तलब है कि किसानों और काश्तकारों ने कई स्थानों पर खुद विद्रोह की शुरुआत की और ताल्लुकदारों के साथ अंग्रेजों की सुलह होने के काफी बाद तक वे लड़ते रहे।

अवध में ताल्लुकदारों और किसानों के बीच पूरा तालमेल था, जिसके कारण वहां एक जन आंदोलन का स्वरूप सामने आया। इसका एकमात्र कारण था अवध का अधिग्रहण। छोटे-बड़े सभी ताल्लुकदारों ने इस विद्रोह में हिस्सा लिया। इनमें 74 प्रतिशत ताल्लुकदारों ने दक्षिण अवध में अंग्रेजों से लड़ाई की। लड़ने वाली फौज में आम जनता की संख्या लगभग 60 प्रतिशत थी। अनुमान है कि अवध की वयस्क पुरुष जनसंख्या में से 3/4 लोगों ने विद्रोह में हिस्सा लिया। इस विद्रोह के दौरान घर-घर से भाले, तलवार और बंदूकें जब्त की गयीं।

बोध प्रश्न 3

1) 1857 के विद्रोह के स्वरूप संबंधी विभिन्न दृष्टिकोण पर दस पंक्तियों में प्रकाश डालें।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

2) ताल्लुकदारों की हिस्सेदारी के पीछे निहित स्वार्थ पर टिप्पणी करें।

....

....

....

....

....

....

3) 1857 के विद्रोह का स्वरूप क्या था? 100 शब्दों में उत्तर दें।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

30.9 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप औपनिवेशिक नीतियों के खिलाफ सिपाहियों और जनता के असंतोष को पहचानने में सफल हो सकेंगे।

- आप सिपाही विद्रोह और जनता के असंतोष को एक साथ जोड़ कर देख सकेंगे,
- विद्रोह के स्वरूप से संबद्ध विभिन्न मतों की जानकारी प्राप्त कर लेने के बाद आपको 1857 के विद्रोह का इतिहास लिखने में मदद मिलेगी। इसके साथ-साथ आपने विद्रोह में जनता की सक्रिय भागीदारी की भी जानकारी प्राप्त की।

30.10 शब्दावली

बनिया : महाजन

इलाका : भू-क्षेत्र

पट्टीदार : गांव की सामूहिक मिल्कियत

ताल्लुकदार : ताल्लुक का मालिक (एक ताल्लुक में कई गांव होते थे, जिसके राजस्व की वसूली का भार ताल्लुकदार पर होता था)।

30.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) (क) × (ख) × (ग) ✓ (घ) × (ङ) ×
2) देखें उपभाग 30.2.1
3) देखें उपभाग 30.2.2

बोध प्रश्न 2

1) देखें उपभाग 30.2.3
2) देखें उपभाग 30.2.3
3) देखें भाग 30.4

बोध प्रश्न 3

1) देखें उपभाग 30.5
2) देखें भाग 30.6
3) देखें भाग 30.5 से 30.8 तक